International Journal of Information Movement Vol.5 Issue III (July 2020)
Website: www.ijim.in ISSN: 2456-0553 (online) Pages 11-14

विष्णु पुराण के सन्दर्भ में चौबीस तत्वों का विवेचनः एक समीक्षात्मक अनुशीलन

डॉ0 बबीता शर्मा
अस्सिटैंट प्रोफैसर
कन्या गुरुकुल परिसर
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय
हरिद्वार।

स्मृति शर्मा
शोध छात्रा
कन्या गुरुकुल परिसर
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय
हरिद्वार।

शोध लेख सारः- जिस सृष्टि में हम रहते हैं उसकी रचना कैसे हुई। इसका वर्णन प्रत्येक धर्म में किया गया हे। धर्म का एक अंग यह भी माना गया है कि वह आत्मा, परमात्मा और सृष्टि के सम्बन्ध में लोगों की जिज्ञासा को शान्त करें। सम्पूर्ण चराचर जगत की उत्पत्ति, स्थिति और लय का तथा मानव जाति के आदिवस-आदिम इतिवृत्त का पुराणों से अधिक स्पष्ट एवं प्रमाणित विवरण उपलब्ध नहीं होता। इस तरह से विश्व वाड्.मय में पुराणों का महत्व अप्रतिम है।

प्राय सभी पुराणों में सृप्ति क्रय या जगत की उत्पत्ति का क्रम एक जैसा ही निरुपित किया गया है। जैसा कि हम सब जानते हैं कि सृष्टि रचना के सम्बंध में प्रत्येक धर्म और ग्रन्थ में कुछ न कुछ बतलाया गया है। इसी क्रम में सृष्टि वर्णन की प्रक्रिया को विष्णु पुराण के अनुसार प्रस्तुत किया गया है।

मुख्य शब्दः- प्रातव्य, अनुग्रह, प्रकृति, पुराण, महत-तत्व, अहंकार।

महर्षि बादरायण प्रणीत अठारह पुराणों में विष्णु पुराण का स्थान सभी योग शास्त्रीय ग्रन्थों में सवोत्तम है। भागवत पुराण से इसका महत्त्व किसी भी दृष्टि से कम नहीं है। भागवत के समान ही विष्णु पुराण का प्रातव्य भी विष्णु पद है, और विष्णु पद की प्राप्ति का साधन भक्ति योग है। भक्ति योग की प्राप्ति भी भगवान के अनुग्रह के बिना सम्भव नहीं हो सकती। यूँ तो भगवान का अनुग्रह अहेतुक होता है फिर भी साधक को अनुग्रह प्राप्ति के लिए हमेशा प्रयत्नशील और अभिलाषी रहना चाहिए। योग के उन्हीं उपायों का सर्वांग विवेचन विष्णु पुराण में विस्तारपूर्वक किया गया है।

यद्यपि हम संक्षेप में विष्णु पुराण की विषय वस्तु का कथन करें तो इसमें सृष्टि और प्रलय का कारण, भूतों का परिमाण, समुद्र, पृथ्वी आदि की उत्पत्ति, सूर्य का परिमाण देवों का वंश, मनु, मन्वन्तर, चारों कल्पों का विभाग, समग्र धर्म, देवर्षि और राजषियों का चरित्र, वैदिक शाखाओं की यथावत रचना, वर्ण धर्म और आश्रम धर्म का विवेचन प्राप्त होता है।

विष्णु पुराण के अनुसार नारायण नानक लोक पितामह ब्रहमा की सृष्टि रचना हेतु प्रवृत होते हैं। वे ही सदा उपचार से उत्पन्न हुए कहे जाते हैं।

जो प्रकृति से भी परे, परमश्रेष्ठ, अन्तरातमा में स्थित परमात्मा रुप वर्ण नाम और विशेषण आदि से रहित हैं, जिनमें जन्म वृद्धि, परिणाम, क्षय और नाश, इन छः विकारों का अभाव है जिनको हमेशा केवल 'है' इतना ही कह सकते हैं और उनमें समस्त विश्व बसा हुआ है, इसलिए विद्वान जिनकों वासुदेव कहते हैं, वही नित्य, अजन्मा, अव्यक्त अक्षय एकरस और हेय गुणों के अभाव के कारण निर्मल परम ब्रहम है। वही कार्य और कारण जगत के रुप से तथा इसके साक्षी पुरुष और महाकारण काल के रुप में स्थित है। इस सब को परमब्रहम की बाल क्रीड़ा ही समझा जाए तो अतिस्योक्ति न होगी।

विष्णु के परम स्वरुप से प्रधान और पुरुष ये दो रुप हुए। विष्णु के जिस अन्य रुप के द्वारा ये दोनों संयुक्त और वियुक्त होते हैं। इस रुपान्तर का नाम ही काल है। बीते हुए प्रलय काल में यह व्यक्त प्रपंच में लीन था। इसलिए प्रपंच के इस प्रलय को प्राकृत प्रलय कहते हैं।

उपनिषद् में कहा गया है कि प्रत्येक वस्तु में प्रभु ने प्रवेश किया है। अतः सारा जगत परमात्मा का मंगलमय स्वरुप है।

परमपिता परमात्मा ने जिस तरह से सृष्टि का आरम्भ किया उस विषय के अलग-2 ग्रन्थकारों ने अपने-2 मत प्रस्तुत किए हैं जिसका वर्णन इस प्रकार से है।

संसार की उत्पत्ति के विषय में अलग-2 पुराणों में भिन्न-भिन्न व्याख्या की गई है। किन्तु भगवान विष्णु के अवतार कपिल मुनि ने सांख्य शास्त्र में भागवत में बड़े विस्तार से न केवल सृष्टि की उत्पत्ति एवं विनाश को स्पष्ट किया है अपितु सृष्टि की उत्पत्ति का भी बड़ा क्रमबद्ध वर्णन किया है। कपिल मुनि का यह सृष्टि विषयक मत ही सांख्य दर्शन के नाम से प्रचलित हुआ।

महर्षि कपिल ने जिस सांख्य दर्शन को लिपिबद्ध किया वह एक द्वैतवादी दर्शन है। इस दर्शन में प्रकृति एवं पुरुष दो सत्ताओं को स्वीकार किया गया है। कपिल मुनि पुरुष को स्पष्ट करते हुए कहते हैं कि 'यह सारा जगत जिस से व्याप्त होकर प्रकाशित होता है वह आत्मा ही पुरुष है। वह अनादि, निर्गुण प्रकृति से परे है। अन्तः करण में स्फुटित होने वाला और स्वयं प्रकाश है। इसी क्रम में प्रकृति की व्याख्या करते हुए कपिल मुनि बताते हैं कि जो त्रिगुणात्मक, अव्यक्त, नित्य और कार्य कारण रुप है तथा स्वयं निर्विशेष होकर भी सभी सम्पूर्ण विशेष धर्मों का आश्य है उस प्रधान नामक तत्व को ही प्रकृति कहते हैं। क्योंकि जगत का विकास प्रकृति से हुआ है अतः प्रकृति को कारण और जगत को कार्य कहा गया है। जगत की सृष्टि से पूर्ण प्राप्ति जो त्रिगुणातीत, निरन्तर गतिशील तथा सक्रिय मान है, साम्य अवस्था में होती है। अब तीनों गुण सत, रज, और तम एक-दूसरे पर प्रबल होने के लिए प्रयत्न करने लगते हैं। इस क्रम में भिन्न-2 गुणों की प्रबलता के परिणाम स्वरूप जगत के भिन्न-भिन्न गुणों की प्रबलता के परिणाम स्वरुप जगत के भिन्न-भिन्न पदार्थों का उद्भव होने लगता है। इसी तरह से जगत का विकास होता है।

कपिल मुनि के जगत के विकास को विस्तार से प्रस्तुत करते हुए प्रकृति की साम्यावस्था से जिन तत्वों की उत्पत्ति होती है उन सभी की उत्पत्ति का वर्णन इस प्रकार से किया है। विकास के क्रम में सबसे पहले महत् तत्व उत्पन्न होता है। इसे बुद्धि भी कहा जाता है। इस महत्त तत्व को भगवान कपिल इस तरह से

परिभाषित करते हैं। [1]'जो सत्व गुण मय, स्वच्छ, शान्त और भगवान की उपलब्धि का स्थान रुप चित्र है वही महत्त्व और उसी को वासुदेव कहते है। विकास के क्रम में ही महत तत्व से अंहकार का विकास होता है। अहंकार का तात्पर्य यहाँ मैं या मेंरा का भाव प्रबल होना। व्यक्तित्व और स्वार्थ का भाव भी अंहकार के कारण ही विकसित होता है। यह अहंकार भी तीन प्रकार का होता है।

1. **सात्विक तथा वैकारिक अंहकारः** वह अहंकार जिस में सत्व गुण की प्रधानता हो, उसे सात्विक अहंकार की संज्ञा दी जाती है। सात्विक अहंकार से क्रमशः मन, पाँच कर्मेन्द्रियाँ और ज्ञानेन्द्रियों का विकास होता है।

2. **तमस अहंकार या भूतादि अहंकारः** जिस अंहकार में तमो गुण की प्रधानता हो उसे तमस अहंकार कहा जाता है। अहंकार के इस रुप से पाँच तन्मात्राओं का उभ्युदय होता है।

यतत्सत्वगुणं स्वच्छं-शान्तं, भगवतः पदम्। यदाहुर्वासुदेवा श्रव्यं चिं तन्महदात्मकम्

श्रीमद् भावगत 3-26-10

3. **रजस अहंकार या तेजस अहंकारः** रजोगुण से युक्त अहंकार को रजस अहंकार कहते हैं। इस अहंकार से किसी वस्तु का विकास नहीं होता। यह अहंकार अन्य दो अहंकारों को विकास क्रम में शान्ति प्रदान करने का कार्य करता है। जगत विकास क्रम में अहंकार से मन का आर्विभाव होता है, मन का अर्विभाव सात्विक अहंकार से होता है। मनुष्य के ज्ञान एवं कर्म के लिए मन का सहयोग होना अनिवार्य होता है। मन ही सभी इन्द्रियों को अनेक विषयों के प्रति प्रेरित करने का कार्य करता है। अतः मन को आभायन्तरिक इन्द्रिय भी कहा जाता है। सांख्य-दर्शन में मन को अनित्य अर्थात विनाश शील माना गया है।

   सात्विक अहंकार से ही पाँच कर्मेन्द्रियाँ उत्पन्न होती है। ये कर्मेन्द्रियाँ शरीर के, मुख, हाथ, पैर, मलद्वार तथा जनन अंगों में स्थित होती है। यहाँ यह स्पष्ट करना उचित रहेगा कि शरीर में इन अंगों को कर्मेन्द्रियाँ नही माना जाता बल्कि इन अंगों के द्वारा सम्पादित होने वाले कार्यों में निहित शक्ति को कर्मेन्द्रिय माना जाता है। इन इन्द्रियों

   के कार्य क्रमशः बोलना, पकड़ना या ग्रहण करना, चलना-फिरना, मल त्याग करना, तथा सन्तान उत्पन्न करना है। कर्मेन्द्रियों की तरह ही ज्ञानेन्द्रियों का विकास भी सात्विक अंहकार से ही होता है। ये भी पाँच ही है। ज्ञानेन्द्रियाँ विभिन्न प्रकार के ज्ञान प्राप्त करने के साधन हैं। पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ क्रमशः रुप, शब्द, गन्ध, स्वाद तथा स्पर्श सम्बन्धी ज्ञान प्राप्त करने में सहायक है। कर्मेन्द्रियों के समान ज्ञानेन्द्रियाँ भी सम्बन्धित अंग नहीं है बल्कि उनमें निहित शक्तियों को ज्ञानेन्द्रियाँ माना जाता है। जिनको प्रत्यक्ष रूप से देखा नहीं जा सकता बल्कि उनके गुण धर्मों के आधार पर ही उन्हें जाना जाता है।

   कर्मेन्द्रियों, ज्ञानेन्द्रियों के समान ही पाँच तन्मात्राएँ भी इसी विकास क्रम में उत्पन्न होती है। इन तन्मात्राओं का उभ्युदय तमस अहंकार से होता है। जिन्हें क्रमशः शब्द, रुप, गन्ध, रस तथा स्पर्श तन्मात्रा कहा जाता है। तन्मात्राएँ वास्तव में भूतों के सार तत्व हैं इनका रुप सूक्ष्म होता है। तन्मात्राओं का ज्ञान ही, प्रत्यक्ष रुप से सम्भव नहीं है। उन्हें केवल अनुमान के द्वारा ही जाना जा

सकता है। सांख्य दर्शन के विकास क्रम में माना गया है कि पंच तन्मात्र सूक्ष्म होते हैं, परन्तु उनसे उत्पन्न होने वासले पंच महाभूत स्थूल रुप होते हैं। पंच महाभूत क्रमशः आकाश, वायु, पृथ्वी, जल और अग्नि हैं। आकाश तत्व की उत्पत्ति शब्द तन्मात्र से हुई है इसका गुण शब्द है। वायु ततव की उत्पत्ति, शब्द और स्पर्श तन्मात्रा से हुई है जिसका गुण क्रमशः शब्द और स्पर्श है। अग्नि नामक महाभूत की उत्पत्ति स्पर्श शब्द और रुप तन्मात्रा से हुई है जिसका गुण शब्द, स्पर्श और रुप है। जल महाभूत की उत्पत्ति चार तन्मात्राओं शब्द, स्पर्श, रुप और रस से होती है। इनके गुण प्रायः शब्द, स्पर्श, रुप और स्वाद है। पांचवा महाभूत पृथ्वी है, जिसकी उत्पत्ति पाँच तन्मात्राओं शब्द, रुप, स्पश्र, रस और गन्ध से होती है। पृथ्वी के गुण क्रमशः शब्द, रुप, स्पर्श, स्वाद और गन्ध है। यद्यपि सभी महाभूतों में एक से अधिक गुण हैं, परन्तु प्रत्येक महाभूत का अपना भी एक विशेष गुण होता है। विश्व की सभी वस्तुओं का निर्माण इन्हीं पंच महाभूतों से होता है विभिन्न वस्तुओं में इन महाभूतों के अनुपात में भी अन्तर होता है।

इस प्रकार उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि कपिल मुनि द्वारा प्रस्तुत साख्य दर्शन में कुल पच्चीस तत्व है। पुरुष, प्रृति, महत्तव्य, अहंकार, मन, पंच ज्ञानेन्द्रियाँ, पंच कर्मेन्द्रियाँ, पंच तन्मात्राएँ, पंच महाभूत। इन सभी तत्वों द्वारा ही सृष्टि की सभी वस्तुओं का निर्माण होता है। क्योंकि इन सभी वस्तुओं का विकास प्रकृति द्वारा होता है, जो त्रिगुणतीत है। अतः संसार की सभी वस्तुओं में सत्व, रज, और तमस का अंश विधमान है। जिसके फलस्वरूप किसी भी वस्तु में राग, द्वेष और उदासीनता का भाव रहता है।

निष्कर्ष : इस प्रकार हम कह सकते हैं कि विष्णु पुराण में परमेश्वर के विविध रूपों का प्रतिपादन किया गया है। परमेश्वर अपने एक अंश से ब्रहमा, दूसरे अंश से मरीचि आदि प्रजापति, तीसरे अंश से काल तथा चौथे भाव से सम्पूर्ण प्राणी होते हैं। फिर वे अव्यक्त स्वरूप भगवान सत्वगुण का आश्रय लेकर जगत का पालन करते हैं।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. श्री श्री विष्णु पुराण-अनुवादक श्रज्ञी मुनि लाल गुप्त, गीता प्रैस, गोरखपुर।
2. विष्णु पुराण-प्रथमों भाग- पं0 थानेश चन्द्र उप्रेति परिमल पब्लिकेशन।
3. वैदिक सम्पति, पंडित रघुनन्दन शर्मा।
4. संस्कृत साहित्य का इतिहास, वाचस्पति गैरोला, चौखम्भा विद्याभवन, वाराणसी।
5. पुराण विमश्र, चौखम्भा विद्याभवन, तृतीय संस्करण।
6. हरिवंश पुराण, इस्टर्न बुक लिडंर्स, प्रथम संस्करण।
7. श्रीमद् भागवत रहस्य, श्री रामचन्द्र डोंगरेजी महाराज, रूपेश ठाकुर, प्रसाद प्रकाशन।
8. ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका आर्य सहित्य प्रचार ट्रस्ट।
9. कल्याण योगांक, गीता प्रेस, गोरखपुर।
10. मार्कण्डेय पुराण, गीता प्रेस, गोरखपुर।
11. पुराणों में सृष्टि और प्रलय, डॉ0 कृष्ण चन्द्र सिंह, सत्यम पब्लिकेशन हाऊस।
12. भारतीय सृष्टि विद्या, डॉ0 प्रकाश, भा0 ज्ञा0 प्र0